**UGC Approved - 45554** **Sangeet Galaxy**
**Vol. 7, Issue. 1 (January 2018) pp. 58-64** **ISSN: 2319-9695**

# वैदिक युग में अवनद्ध वाद्य

कविता मिश्रा
शोध छात्रा
संगीत एवं प्रदर्शन कला विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
Email: kavita2710lucky@gmail.com

भारतीय वाड्.मय में प्राचीनतम् गन्थ वेद है।[1] सामवेद का संगीत की दृष्टि से विशिष्ट स्थान है। इसमें भारतीय संगीत का अनादि स्वरूप प्रथम बार अभिव्यंजित हुआ है।[2] वैदिक युग की अभिव्यक्ति सामूहिक थी, जिसमें गेयत्व की प्रधानता थी। वैदिक साहित्य के प्रणयन से पहले ही साहित्य, सभ्यता और संस्कृति के अन्तर्गत कई वाद्यों का जन्म और प्रचार हो चुका था। गायन के साथ वाद्यों का भी प्रयोग होता रहा है। डॉ० परांजपे के अनुसार ऋग्वेद में निम्न वाद्यों का उल्लेख पाया जाता है –दुन्दुभि वाण, नाली, कर्करि , गोधा , पिंग और आघाति। इसमें दुन्दुभि के अतिरिक्त अन्य वाद्यों का स्वरूप – निर्णय वर्तमान स्थिति में संदिग्ध है। प्रकृति की ही गोद में विभिन्न वाद्यों ने भी अपना शैशव व्यतीत किया। ऋग्वेद में अनेक मंत्रो में स्तुतियॉ मिलती है, जिसमें वाद्यों की अभिव्यक्ति है।[3]

**ऋग्वेद में अवनद्ध वाद्य** –

वैदिक काल में दुन्दुभि नामक वाद्य का उल्लेख बहुतायत से मिलता है जिसके अनुसार दुन्दुभि की ध्वनि बहुत प्रबल मानी गयी है।[4] दुन्दुभि की धीर गम्भीर ध्वनि का उल्लेख अनेक बार हुआ है[5] –

*यच्चिद्धि त्वं गृहेग्गह उलूखलक युज्यसे।*
*इह द्युमन्तम वद ज्यतामिव दुन्दुभिः।।*[6]

''हे उलूखल, यदि तू प्रत्येक गृह में वर्तमान है, तो इस वैदिक कर्म में उसी प्रकार का प्रभूत ध्वनियुक्त शब्द कर, जिस प्रकार विजय की दुन्दुभि शब्द करती है।''

'अमरकोष' की व्याख्या सुधा में भानु दीक्षित ने इसकी व्युत्पत्ति के सन्दर्भ में कहा है– 'दुन्दु इति शब्देन भॉति इति दुन्दुभिः अर्थात दन्दु ध्वनि से जो प्रकट हो, वह दुन्दुभि है। एक दूसरी व्युत्पत्ति भी बतलाई है– द्यामुभति। उभूपरेण जो आकाश को शब्द से भर दे वह है दुन्दुभि। 'अमरकोश' में दुन्दभि को भेरी वर्ग में गिनाया है– 'भेर्यामानकदुन्दुभि'।[7]

ऋग्वेद के छठे मण्डल में लगातार तीन ऐसे मंत्र आये है। जिनमें युद्ध के उत्साहवर्धन के लिए दुन्दुभि का सुन्दर वर्णन प्राप्त होता है –: 6.47.29 , 6.47.30 , 6.47.31

*उपाश्वासय पृथिवीमुत घां पुरूत्रा ते मनुतां विष्ठितंजगत्।*

*स दुन्दुभे सजूरिन्द्रेण देवैदूराद्दवींयों अप सेध शत्रून।।*

हे दंन्दंभि के सदृश गरजने वाले जैसे वह जगदीश्वर भूमि या अन्तरिक्ष को और भी सूर्य का बिजली को विशेष करके स्थिति व्यतीत होने वाले संसार को जाने, उस जान से संपूर्ण पदार्थो में हुए बिजली रूपी अस्त्र से और विद्वान वीरों से संयुक्त आप शत्रुओं को दूर से अति दूर हटाए और जो आपके कल्याण को जाने, उसकी उपासना करके सबको समझाइये है।[8]

*आमूरज प्रत्यावर्तयेमाः केतुमदुन्दुभिवविदोति।*
*समश्वपर्णाश्वरन्ति नो नरोऽस्माकमिन्द्र रथिनो जयन्तु।।*[9]

हे राजा आदिजनो! तुम लोग दुन्दुभि वादित्रों स भूषित, हर्ष व पुष्टि से युक्त सेनाओं को अच्छे, प्रकार रखकर इनसे दूरस्थ भी शत्रुओं को अच्छे प्रकार जीतकर प्रजाओं को धर्मयुक्त व्यवहार से पालन करो।[10]

ऋग्वेद के साक्ष्य से स्पष्ट है कि बैलों की खाल पकाने की कला तथा उसको विविध उपकरणों के लिए योग्य बनाने की कला ऋग्वेद काल में अवगत थी।[11] 7.63.1 इसमें यह सबल अनुमान किया जा सकता है कि वाद्यों के लिए उपयोगी चर्म वाद्य बनाने की कला भी उस समय प्रचलित थी।

ऋग्वेद में गर्गर नामक एक और अवनद्ध वाद्य का उल्लेख है –

*अवं स्वराति गर्गरो गोधा परि सनिष्वणत्।*
*पिङ्गा परि चनिष्कददिन्द्रोय ब्रहोद्यतम्।।*[12]

गर्गर पर सायणभाष्य इस प्रकार है – ''गर्गरध्वनियुक्तों वाद्यविशेंषः अवः स्वराति'' का अर्थ सायण ने इस प्रकार दिया है – भयं शब्दयति अर्थात 'गर्गर ध्वनि करने वाला विशेष'। स्पष्ट है कि गर्गर ध्वन्यनुकारी शब्द है। यह एक प्रकार का चमड़े का वाद्य था जिसमे गर – गर ध्वनि गंजती थी। गर – गर की गूंज शत्रुओं के हृदय में भय उत्पन्न करती थी।[13] वैदिक इंडेक्स में मात्र एक वाद्य यंत्र के रूप में इसका विवरण मिलता है –

Apprently the designstion of musical instrument is bold mentioned once in the rigveda. [14]

**यजुर्वेद में अवनद्ध वाद्य** –

यजुर्वेद संहिता में दुन्दुभि, भूमिदुन्दुभि वाद्यों का उल्लेख है। वाजपेय यज्ञ में महावेदि के चारों कोनों पर 17 दुन्दुभि स्थापित किये जाते थे और रथों की प्रतियोगिता के साथ इनकी तुमुलध्वनि प्रोत्साहन के रूप में प्रचलित रहती थी।[15] महेन्द्र स्त्रोत के द्वारा सूचना दिये जाने पर वीणाओं के साथ दुन्दुभियों का घोष किया जाता था। वीणा, तूणव तथा दुन्दुभियों के सम्बन्ध में तैत्तिरीय संहिता में मनोरंजक आख्यायिक पायी जाती है।

*''वाग्वै देवेभ्योऽपाक्रामद्यज्ञायातिष्ठमाना सा वनस्पतीन् प्रविशत् सैषा*
*वाग्वनस्पतिषु वदति या दुन्दुभौ या तूणवै या वीणायाम्''।*

तात्पर्य यह है कि वाक् देवी देवताओं से किसी कारण अप्रसन्न होकर वनस्पतियों में प्रविष्ट हुई। वही वाणी दुन्दुभि, तूणव तथा वीणादि काष्ठनिर्मित वाद्यों से ध्वनित होती है।[16]

यजुर्वेद में दुन्दुभि तथा भूमि दुन्दुभि नामक अवनद्ध वाद्यों का गौरवपूर्ण उल्लेख हुआ है। शुक्ल यजुर्वेद में दुन्दुभि की वन्दना निम्न शब्दों में की गयी है।

*'नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय चेति।'*

कृष्ण यजु में तैतरीय संहिता में दुन्दुभि की धीर गंभीर ध्वनि के सम्बन्ध में निम्न वचन है –

*''दुन्दुभि – समाध्नन्ति परमा या एषा वाग्या दुन्दुभौ परमामेव वाचमव रूनते।''*
*''भूमिदुन्दुभिमाध्नन्ति यैवेमां वाक् प्रविष्टा तामेवावरून्धतेऽयो इमामेव जयन्ति।''*

भूपृष्ठ पर बनायी गयी दुन्दुभि के लिए भूमिदुन्दुभि संज्ञा है। भाष्यकार भट्टभाष्कर के शब्दों में चर्मणा में – 'चर्मणा अच्छारितमुखम् भूगर्भम्।' सामान्य दुन्दुभि का निर्माण काष्ठ कुहर पर चर्माच्छादन करने से होता है, भूमिदुन्दुभि के लिए काष्ठ का उपयोग नहीं होता, केवल भूमि पर गहरा गर्त खोदकर उसी को चर्म से आच्छादित किया जाता है तथा 'आहनन' नामक वादन दण्ड से इसका वादन किया जाता है।

यजुर्वेद के सूत्रवाड्.मय में इसकी निर्माणविधि सविस्तार उपलब्ध है।[17] बोधायन श्रोत सूत्र के अनुसार –

*''आधनेनान्नीध गते खादयित्वार्षभेण क्रचर्मणोत्तरलोम्नाऽभिविध्नन्ति विध्नन्ति*
*तस्यलगूलैमत्खिद्य हन्तानुपतिष्ठते त्रैतान्दुन्दुभीननर्दुदशमासन्जयन्ति नाना हननैरमाध्नतएते हन्तारोऽनू प्रतिष्ठन्ते।''*

अर्थात अग्नीध्रीय मण्डप के पश्चिम एक गड्ढा खोदा जाता था तथा उसको बैलों के नवीन चर्म से आच्छादित किया जाता था, जिसमें केश वाला भाग ऊपर की ओर होता था। इस चर्म के चारों ओर से खुटियों के द्वारा भूमि में पक्का कर दिया जाता था।[18] इस प्रकार की दुन्दुभि को बजाने के लिए उसी बैल का पुच्छ वादनदण्ड के रूप में काम मे लाया जाता था।[19]

यजुर्वेद के 30वें काण्ड के 19वें और 20वें मंत्र में कुछ वाद्यों का उल्लेख आया है –

*नर्माय पुश्चलूं हसाय कारिं यादसे शाबल्य ग्रामण्यं गणकमभिकोशक तान्महसे वीणावादं पाणिघ्नं तूणवध्मं तान्नृत्तायानन्दाय तलवम्।*

परिहास के लिए व्याभिचारिणी को, उपहास के लिए बहुरूपिये को, जल जन्तुओं के लिए शबल जाति के पुरूष को, ग्रामनेता ज्योतिष्ज्ञ सूचना देने वाले इनको सत्कार के लिए महोत्सव के

लिए वीणावादक को, ताली बजाने वाले को, नृत्य के लिए तूणव बजाने वाले को, आनन्द के लिए तलव को ( जाने )।[20]

यजुर्वेद मे आडम्बर नामक वाद्य का उल्लेख है आडम्बर भेरी वर्ग का एक अवनद्ध वाद्य था। अमरकोश ने भी इस शब्द का यही अर्थ लिया है। आ उपसर्ग और डबि धातु से यह शब्द बना है चारो ओर जो ध्वनि को जोर से फेके वह है 'आडम्बर'।

सामवेद की ऋचाओं में किसी वाद्य विशेष की चर्चा उपलब्ध नहीं है परन्तु ब्राह्मण और उपनिषद् ग्रन्थों में दुन्दुभि , गर्गर, आडम्बर आदि वाद्यों का उल्लेख ऋचाओं में मिलता है।[21]

**अथर्ववेद में अवनद्ध वाद्य** –

सांगीतिक वाद्यों की दृष्टि से भी अथर्ववेद का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है। साम विषयों के वर्णन मे जो मंत्र प्राप्त होते है, उनमें भी वाद्य और वाद्य ध्वनि के विषय में उल्लेख प्राप्त होता है। अथर्ववेद में गाथा गान प्रातः काल प्रबोधन संगीत, लौकिक संगीत के अन्तर्गत वैवाहिक अवसरों पर प्रयोग किये जाने वाले मंत्र नाराशंसी नामक लौकिक गीत के अन्तर्गत आघाट, कर्करी, दुन्दुभी इत्यादि वाद्यों का उल्लेख प्राप्त होता है।

वैदिक वाड्.मय में युद्ध विषयक श्लोकों में दुन्दुभि वाद्य और उसकी ध्वनि का उल्लेख विशेष तौर पर किया गया है। दुन्दुभी ही ऐसा वाद्य है, जिसका उल्लेख अन्य वाद्यों से अधिक किया गया है। अथर्ववेद में भी दुन्दुभि वाद्य की चर्चा भूरिशः हुई है।[22]

*संजयन् पृतेना उर्ध्वामायुगृंहया गृहणना बहुधा विचक्ष्व।*
*देवी वाचे दुन्दुभ आ गरस्व वेधा शत्रुणामपभरस्व।।*

ऊॅचा शब्द करता हुआ संग्राम को जीतता हुआ ग्रहण करने योग्य सेनाओं को ग्रहण करता हुआ तू बहुत प्रकार से देखता रहा। हे दुन्दुभि। दिव्य गुण वाली वाणी को उच्चारण कर विधान करने वाला तू वैरियो का धन लाकर भर दे।

*उच्चैर्घोषो दुन्दुभिः सत्वानायन वानस्पत्यः समृत अस्त्रियाभि।*
*वाचै क्षुणुवानों दमयन्सपत्नान्त्सि ह इव जेष्यन्नभि तैस्तनीहि।।*[23]

शब्द ऊॅचा रखने वाला, पराक्रमियों के समान आवरण करने वाला, सेवनीयों के पालकों से प्राप्त हुआ बस्तियों की रक्षक सेनाओं से यथावत् रक्खा गया। शब्द करता हुआ वैरियों को दबाता हुआ दुन्दुभि तू सिंह के समान जीत चाहता हुआ सब ओर गरजता रहे।

*दुन्दुसेर्वाचं प्रयता वदन्तीमाश्रृण्वती नाथिता घोषबुद्धा।*
*नारी पुत्रं धावत् हस्त गृह्यामित्री भीता संमरेबधानाम्।।*

दुन्दुभि की नियमित गूंजती हुई, ध्वनि को सूक्ती हुई, गर्जन से जागी हुई, अधीन हुई मारू, शास्त्रों के सभर में डरी हुई वैरी की नारी पुत्र को हाथ में पकड़ कर जावे।[24]

अथर्वकालीन दुन्दुभि काष्ठ से बनायी जाती थी तथा उसका मुख चर्म से आनद्ध होता थां।

*वानस्पपत्यः संभृत उस्रियाभिर्विश्वगोत्र्यः।*
*पत्रासमभित्रेभ्यों वदाज्येनाभिधारितः।।*

हे दुन्दुभि सेवानियों के पालक से प्राप्त हुआ, वस्तियों की रक्षक सेनाओं से यथावत् रखा गया, समस्त कुलो हितकारक तू वैरियो को अतिभय कह दे, घी से सींचा हुआ।

उस समय मान्यता विद्यमान थी कि दुन्दुभि की ध्वनि गम्भीर एवं मोहक हुआ करती है। शत्रुओ की त्रासना तथा मोहन दोनों करने की शक्ति उसमें है।

*यथा श्यनात पतत्रिणः संविजन्ते अहर्दिवि सिंहस्य स्तनथोर्यथा।*
*एवा त्वं दुन्दुभ ऽभित्रानभि क्रन्द प्रत्र तोस्यार्थो वितानि मोहय।।*

जैसे श्येन से पक्षी प्रतिदिन डर कर भागते है, और जैसे सिंह की गर्जन से, वैसे ही हे दुन्दुभिः वैरियो पर गर्ज और डरा दे, और भी उनके चित्रों को घबड़ा दे। ?[25]

दुन्दुभि के मुख्याच्छादन के लिए हरिण के चर्म का प्रयोग किया जाता रहा हो, ऐसा निम्न मंत्रों से प्रतीत होता है।[26]

*परामित्रान् दुन्दुभिना हरिणस्याजिनेंन च।*
*सर्वदेवा अतित्रसनं ये संग्रामस्येज्ञते।।*

जो विद्वान लोग संग्राम के स्वामी होते है उन सब महात्मा लोगों ने हरिण के चर्म से युक्त दुन्दुभि से निश्चय करके हरा कर डरा दिया।

दुन्दुभि का घोष समस्त दिशाओं में परिव्याप्त होने की बात अथर्ववेद में उल्लिखित है।

*ज्याघोष दुन्दुभ्योऽभि क्रोंशन्त या दिशः।*
*सेनाः पराजिता यतीरमित्राणामनीक्शः।।*

हमारी प्रत्यंचा के शब्द और सब दुन्दुभि व्यापक दिशाओं में श्रेणी चलती हुई वैरियों की हारी सेनाओं पर पुकार मचावें।[27]

मिट्टी अथवा धातु से निर्मित ढॉचे वाली व सदा चमड़े से मढ़ी हुई दुन्दुभि का जो उल्लेख उपर्युक्तानुसार वेदों में मिलते हैं उनके अनुसार निम्नलिखित तथ्य निकाले जा सकते है –

1. दुन्दुभि का घोष अत्यन्त प्रबल था, जो स्थावर से जंगम पर्यन्त व्याप्त हो जाता था।
2. उक्त वाद्य देवो के सहचर के रूप मे वर्णित हैं

3. दुन्दुभि का शब्द शत्रुओं को भयाक्रान्त करने वाला है तथा प्रयोक्ता पक्ष में वीरता का संचार करने वाला है।
4. इसकी ध्वनि घोषणा के रूप में है यह घोषणा युद्धों में विजित होने की, शत्रुओं को ललकारने की अथवा किसी भी रूप में हो सकती थी।
5. यह संग्राम में, उत्सव में, मंगल के लिए अथवा जयघोष के लिए बजायी जाती थी।[28]
6. दुन्दुभि वाद्य का प्रयोग युद्ध के अतिरिक्त पूजा आदि मंगल कार्य में भी होता था।[29]

**निष्कर्ष** –

सारांशतः वैदिक वाड्.मय में दुन्दुभि और भूमि दुन्दुभि वाद्य तथा उसके ध्वनि का उल्लेख सर्वाधिक प्राप्त होता है। दुन्दुभि अवनद्ध वाद्यों के अन्तर्गत चमड़े से मढ़ा हुआ वाद्यों के अन्तर्गत आती है। दुन्दुभि वाद्य का प्रयोग वेदों में युद्ध वर्णन के साथ – साथ यज्ञों में भी होता था। सामगायन के साथ भी दुन्दुभि वाद्य का प्रयोग उल्लेखनीय है। अवनद्ध वाद्य दुन्दुभि के अतिरिक्त वेदों में चमड़े से बना हुआ पणव वाद्य का भी उल्लेख प्राप्त होता है। वैदिक अध्ययन से पता चलता है कि उस काल में गायन के साथ विभिन्न वाद्यों का प्रयोग एवं प्रचार अनिवार्य रूप में था तथा वैदिक ऋचाओं में वाद्य अपना एक प्रमुख स्थान रखते थे।

**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –**

1. मिश्र, अरूण कुमार – भारतीय कण्ठ संगीत और वाद्य संगीत – कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली–पृ०,17
2. भार्गव, अंजना– भारतीय संगीत शास्त्रो मे वाद्यों का चिन्तन – कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली–पृ०, 10
3. प्रांजपे, शरच्चन्द श्रीधर– भारतीय संगीत का इतिहास – चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी – पृ०, 20
4. संगीत पत्रिका, हाथरस, अंक अक्टूबर 2012 – पृ० 19
5. परांजपे, शरच्चन्द श्रीधर– भारतीय संगीत का इतिहास – चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी – पृ०,22
6. सरस्वती महर्षि स्वामी दयानन्द '– ऋग्वेद (हिन्दी भाष्य) – सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा – पृ०,145
7. सिंह, ठाकुर जयदेव – भारतीय संगीत का इतिहास – विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी– पृ०, 30
8. सरस्वती महर्षि स्वामी दयानन्द '– ऋग्वेद (हिन्दी भाष्य) – सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा – पृ० 562
9. सरस्वती महर्षि स्वामी दयानन्द '– ऋग्वेद (हिन्दी भाष्य) – सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा – पृ० 563
10. मिश्र, अरूण कुमार – भारतीय कण्ठ संगीत और वाद्य संगीत – कनिष्क पब्लिशर्स,नई दिल्ली–पृ०, 17
11. परांजपे, शरच्चन्द श्रीधर– भारतीय संगीत का इतिहास – चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी – पृ०, 25

12. सरस्वती महर्षि स्वामी दयानन्द '– ऋग्वेद (हिन्दी भाष्य) – सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा – पृ० 508
13. सिंह, ठाकुर जयदेव – भारतीय संगीत का इतिहास – विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी – पृ०, 32
14. वैदिक इडेक्स वी –1– पृ०, 220
15. द्रष्टव्य महाराष्ट्रीय ज्ञानकोश, वैदिक खण्ड, पृ०, 133
16. परांजपे, शरच्चन्द श्रीधर– भारतीय संगीत का इतिहास – चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी – पृ०, 32
17. 16/20 तुलनार्थ द्र० आप० 21/18, सत्या० हिरण्य 16/16 कात्या 1.3/3 लाटया 3. 11/1.3
18. शुकुभिः परिणिहत्य आप० 21/18 तथा सत्या – 16/6
19. परांजपे डॉ0 शरच्चन्द श्रीधर– भारतीय संगीत का इतिहास – चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी – पृ०, 34
20. सरस्वती महर्षि स्वामी दयानन्द '– यजुर्वेद (हिन्दी भाष्य) – सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा – पृ०, 1040
21. मिश्र, अरूण कुमार – भारतीय कण्ठ संगीत और वाद्य संगीत – कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली– पृ०, 20
22. वही, पृ०, 23
23. त्रिवेणी, क्षेमकरण दास –अथर्ववेद (हिन्दी भाष्य) – सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, पृ० 531
24. वही, 535
25. त्रिवेणी, क्षेमकरण दास –अथर्ववेद (हिन्दी भाष्य) – सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा–पृ०, 536
26. वही, पृ०, 52
27. वही, पृ०, 537
28. संगीत पत्रिका अंक अक्टूबर – डॉ० रेनू जौहरी – वाद्यों की प्रतीक धर्मिता अवनद्ध वाद्यों के विशेष सन्दर्भ में – पृ०, 20
29. मिश्र, अरूण कुमार – भारतीय कण्ठ संगीत और वाद्य संगीत – कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली– पृ०, 23